स्वर्ण के. जैन

बनाम

रवि महाजन व अन्य

सिविल अपली संख्या {5471/2000}

अप्रैल 2, 2000

{डा0 अरिजीत पासायत व लोकेश्वर सिंह पान्टा, जे. जे.}

संपत्ति का अंतरणः

कब्जे के लिए वाद- वादी द्वारा वाद हेतु कब उत्पन्न हुआ इस सम्बन्ध में विवरण प्रदान करने में लोप- उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष में कोई असंगतता नही है कि लोप सोच समझकर किया गया था एवं अनजाने में नही किया गया था। अतः उच्चतम न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप का कोई मामला नही बनता है-

जम्मू और कश्मीर सम्पति अधिनियम 1977- धारा 138- सम्पत्ति अंतरण अधिनियम 1982

कब्जे के लिए वाद में, वादी का यह अभिकथन की प्रतिवादी ने उसकी भूमि पर अतिचार किया एवं उसकी भूमि पर सीमा दीवार बना दी। यह भी अभिकथन किया गया कि जब वादी ने, प्रतिवादीगण द्वारा वादग्रस्त भूमि पर किये जा रहे अवैध कब्जे का विरोध किया एवं कालांतर में प्रतिवादीगण द्वारा वादग्रस्त भूमि को खरीदने का प्रस्ताव दिया गया किन्तु वादग्रस्त भूमि के विक्रय के प्रस्ताव अथवा प्रयास अमल में नही लाये जा सके तथा प्रतिवादीगण द्वारा वादग्रस्त भूमि पर अवैध कब्जा निरंतर जारी रहा।

प्रतिवादीगण द्वारा यह आधार लिया गया कि अपने ही कृत्य व आचरण से प्रश्नगत वाद संस्थित करने से विवन्धित है। क्योंकि उसने पूर्ण विक्रय प्रतिफल को

स्वीकार किया है। प्रतिवादीगण ने यह भी तर्क दिया कि वादी ने जानबूझकर यह अंकित नही किया है कि वाद हेतु कब उत्पन्न हुआ तथा वाद हेतु उत्पन्न करने में लोप जानबूझकर नही होकर आशयपूर्वक किया गया था।

जब उच्च न्यायालय ने धन प्राप्ति की तीन रसीद पेश की गई तो वादी ने एक भी शब्द इस सम्बन्ध में नही कहा कि कैसे व किन परिस्थितियों में रसीदों को निष्पादित किया गया। वादी ने इस सम्बन्ध में भी अनभिज्ञता प्रकट की है कि सीमा दीवार को कब बनाया गया।

उच्च न्यायालय अन्ततः इस निष्कर्ष पर पहुचा कि वादी द्वारा वाद हेतु के सम्बन्ध में विवरण देने में लोप आशयपूर्वक था। इस निष्कर्ष को इस अपील मे चुनौती दी गई है।

अपील को खारिज करते हुये न्यायालय ने यह अवधारित कियाः

1. वादी के लिए यह आवश्यक था कि वह इस सम्बन्ध में साक्ष्य प्रस्तुत करें कि धन प्राप्ति की रसीद की लिखावट अस्तित्व में कैसे आई। वाद हेतु के सम्बन्ध में किसी विवरण का अंकन नही किया गया हैं तथा निर्माण कब किया गया इसकी कोई तारीख भी अंकित नही की है। {पैरा 8} {1034- एफ}

2. उच्च न्यायालय के निष्कर्ष में किसी प्रकार की असंगतता नही है। उच्च न्यायालय ने इस बिन्दु पर विस्तृत रूप से विचार किया है कि वाद हेतु के सम्बन्ध में लोप जानबूझकर किया गया था तथा लोप लापरवाही पूर्वक नही किय गया था। यह एक ऐसा प्रकरण है जहा उच्च न्यायालय के तार्किक एवं कारण सहित आदेश में कोई हस्तक्षेप किया जाना प्रकट नही होता। [पैरा 10, 11] [1035- डी, ई और एफ]

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार- सिविल अपील संख्या 5471/2000।

जम्मू कश्मीर उच्च न्यायालय के एल.पी.ए{सी} संख्या 8/1993 के अन्तिम निर्णय व आदेश दिनांक 19.07.1999 से।

अपीलार्थी की ओर से- नरेश कौशिश, ललिता कौशिक, बी.एस मथालिया, अमिता कलकल, पराग गोयल व सतीश डी।

प्रत्यर्थी की ओर से- एस.आर. सिंह, बिमल राय जद और सुनीता पंडित।

न्यायालय का निर्णय डा0 अरिजीत पासायत, जे. द्वारा सुनाया गया।

1. इस अपील में जम्मू कश्मीर उच्च न्यायालय की डिवीजन बैंच द्वारा उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय को पलटने वाले निर्णय को चुनौती दी गई।

2. पृष्टभूमि में मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार है।

प्रतिवादीगण का, जो कि उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलांट थे, यह आधार रहा है कि वादी अपने स्वयं के कृत्य व आचरण से, प्रतिवादीगण से कब्जा प्राप्त करने हेतु यह प्रश्नगत वाद संस्थित करने से विबन्धित है क्योंकि उसमें सम्पूर्ण विक्रय प्रतिफल को प्राप्त कर लिया है तथा अनुतोष का दावा करने का हकदार नही है।

यह भी प्रस्तुत किया गया कि वाद हेतुक कब उत्पन्न हुआ, इसे वादी द्वारा आशयपूर्वक अंकित नही किया गया है तथा वाद हेतुक के अंकन का लोप लापरवाही पूर्वक नही होकर आशयपूर्वक है। इस सम्बन्ध में जम्मू व कश्मीर अन्तरण अधिनियम, 1977 {1920 ए.डी} की धारा 138 का भी हवाला दिया गया।

वादी अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि आंशिक पालन का सिद्धांत, जैसा कि सम्पत्ति अंतरण अधिनियम में प्रतिपादित किया गया है, का इस अधिनियम में वर्णन नही किया गया है। अतः प्रतिवादीगण अतिचारी है। अतः इस कारण से वादी का दावा विफल नही होता है।

उच्च न्यायालय के समक्ष पी.डब्ल्यू 1 के रूप में वादी के परीक्षण के समय तीन दस्तावेज, रसीद दिनांक 30.01.74, 19.11.73 व 23.03.74 पेश किये गये। पी. डब्ल्यू 1 के रूप में परीक्षित होने पर वादी ने इस सम्बन्ध में एक शब्द भी नही कहा है कि किन परिस्थितियों में व कैसे इन दस्तावेजों को निष्पादित किया गया। वादी ने इन दस्तावेजों का निष्पादन व सीमा दीवार का प्रतिवादीगण द्वारा बनाया जाना स्वीकार किया है। यद्धपि वादी ने इस सम्बन्ध में अपनी अनभिज्ञता प्रकट की है कि निर्माण को कब बनाया गया। दीवार की उचाई व प्रतिवादीगण की रास्ते पर पहुच स्वीकृत है। अपने कथनों की अन्तिम लाइन में उसने यह भी स्वीकार किया है कि धन प्राप्ति के एक या दो साल के भीतर उसने प्रतिवादीगण को सीमा दीवार का निर्माण करते हुये देखा था। खण्ड पीठ का यह निष्कर्ष की प्रतिवादीगण के विरूद्ध वाद लाने हेतु, वाद हेतु कब उत्पन्न हुआ इस सम्बन्ध में विवरण देने में लोप आशयपूर्वक था। यदि इन तथ्यों को विशेषतः अंकित किया गया होता तो प्रतिवादीगण उनकी प्रतिरक्षा करते। इस लोप के होते हुये भी प्रतिवादीगण द्वारा अपने प्रकरण को अन्वीक्षित /चलाया गया और वादी के दावे को विवादित किया गया। इस सम्बन्ध में कोई प्रत्युत्तर फाइल नही किया गया है। उच्च न्यायालय में जम्मू कश्मीर अधिनियम की धारा 138 को पेश किया गया जो इस प्रकार है-

138 अचल सम्पत्ति के पंजीकरण के पश्चात अन्तरण-

(1) देश में प्रवृत्त विशेष विधि द्वारा शासित मामले के सिवाय, अचल सम्पत्ति का ऐसा कोई भी अंतरण वैध नही होगा जब तक की वह लिखित व रजिस्टर्ड न हो और रजिस्ट्रेशन एक्ट 1977 की धारा 61 की उपधारा 3 के अनुसार रजिस्ट्रेशन पूर्ण न हो।

(2) कोई भी न्यायालय, अचल सम्पत्ति के अंतरण के हकशुफा का वादग्रहण नही करेगा जब तक कि उपधारा (1) के अनुपालना में अंतरण नही हुआ हो।

(3) कोई भी व्यक्ति जम्मू कश्मीर राज्य की सीमाओं के भीतर स्वयं को अंतरित या अंतरित करने के लिए आशयित भूखण्ड का कब्जा प्राप्त नही करेगा व निर्माण नही करेगा जबतक कि अंतरण उपधारा (1) के अनुसार वैध नही हो जाता।

(4) कोई भी व्यक्ति, जिसने उपधारा (1) के अनुसार अचल सम्पत्ति का अंतरण प्राप्त किया है, राजस्व, सेटलमेंट अधिकारी एवं न्यायालय से सेटलमेंट रिकार्ड में संशोधन प्राप्त नही करेगा जबतक कि ऐसा व्यक्ति नियमानुसार निष्पादित रजिस्टर्ड विलेख ऐसे अधिकारी या न्यायालय के समक्ष पेश न कर देवे। (जब उपधारा 1 के अनुसार रजिस्ट्रेशन पूर्ण हो गया हो। तथा ऐसा अधिकारी व न्यायालय ऐसा कोई संशोधन न तो करेगा, न ही किसी प्रविष्ठि में संशोधन करायेगा जब तक कि पूर्व उपबन्धित अनुसार रजिस्टर्ड विलेख प्रस्तुत न हो।

परन्तु इस धारा की कोई बात कृषि भूमि के एक वर्ष के लिए पटटे व अन्य भूमि के सात वर्ष से अनधिक अवधि के पटटों पर लागू नही होगी।

परन्तु उपधारा (3) व (4) की कोई बात वसीयत द्वारा अंतरण को व उत्तराधिकार के किसी नियम को और उत्तराधिकार की किसी भी प्रवृत्त विधि पर प्रभाव नही डालेगी।

(5) धारा 138 की उपधारा 1 के उच्च न्यायालय में प्रस्तुत किये जाने पर उच्च न्यायालय ने यह पाया कि अंतरण लिखित में हो तथा रजिस्ट्रेशन एक्ट 1977 की धारा 61 की उपधारा 3 के अनुसार पूर्ण किया गया हो। धारा 138 की उपधारा (3) केवल जम्मू राज्य की सीमाओं में भवन व भूमि का कब्जा लेने पर निर्बन्धन लगाती है। जम्मू राज्य की सीमाओं के सम्बन्ध में उपरोक्त लोप को विद्धवान एकल न्यायाधीश द्वारा भी अंकित /निर्धारित नही किया गया है। जैसा की Ex. PW3 से स्पष्ट होता है कि वादी ने प्रतिवादीगण से 23 मार्च 1974 तक भुगतान प्राप्त किया है।

अपीलकर्ता के विद्धवान अधिवक्ता का यह आधार कि वाद, करार के निष्पादन की तारीख 16.09.82 से 8 साल बाद पेश किया गया है। संम्पूर्ण प्रतिफल की अदायगी नही की गई है तथा 5000 रूपये 1976 तक प्राप्त नही किये है। खण्डपीठ द्वारा सम्पूर्ण भुगतान के बिन्दु पर विचार नही किया गया है जो कि विद्धवान एकल न्यायाधीश द्वारा किया गया है। तथा यह भी दर्शित किया गया है कि वाद हेतुक के सम्बन्ध में विवरण प्रदान करने का लोप आशयपूर्वक नही था, जैसा कि खण्डपीठ ने पारित किया।

प्रतिउत्तर में प्रतिवादीगण के विद्धवान अधिवक्ता ने यह दर्शित किया कि विद्धवान एकल न्यायाधीश के समक्ष सुनवाई के दौरान जम्मू कश्मीर अधिनियम की धारा 138 प्रस्तुत नही की गई है किन्तु खण्डपीठ ने विधिक स्थिति को विस्तृत रूप से विश्लेषित किया इस कारण से हस्तक्षेप की कोई स्थिति प्रकट नही होती है।

वादी से अपेक्षित था कि वह इस बारे में यह अभिकथन करे कि धन की रसीद की हस्तलेख किस प्रकार अस्तित्व में आई। वाद हेतुक के बारे में कोई विवरण प्रकट नही किया गया तथा निर्माण कब किया इस बारे में कोई दिनांक अंकित नही की गई।

वादपत्र में किये गये कथन को जिस रूप में पढा गया है वे इस प्रकार है-

> ‘‘यह कि प्रतिवादीगण संख्या 1 ने जम्मू कश्मीर राज्य से निकटवर्ती भूखण्ड खरीदा तथा खरीदने के बाद प्रतिवादी संख्या 1 ने भूखण्ड पर अपने घर का निर्माण किया तथा जब प्रतिवादी संख्या 1 का मकान रहने के लिए तैयार हुआ तो वह उसमें रहने लग गया। इस दौरान यघपि उसने वादी के प्लाट की भूमि पर अतिक्रमण किया एवं समय के अंतराल में वहा सीमा दीवार भी बना दी तथा वह तब से उसे आंगन के रूप में उपयोग में ले रहा है। प्रतिवादी संख्या 2 से 4, प्रतिवादी संख्या 1 करीबी रिश्तेदार है तथा उसके साथ रहते है तथा वे वादी की अनुमति के

बिना उसके भूखण्ड का उपयोग भी कर रहे है। यधपि प्रतिवादी संख्या 2 लगायत 4, प्रतिवादी संख्या 1 के पत्नि और पुत्र है, फिर भी उन्हें प्रतिवादी के रूप में संयोजित किया गया है ताकि उनके असंयोजन के प्रतिवादी संख्या 1 के किसी भी तर्क को टाला जा सके।"

यह कि वादी ने, प्रतिवादीगण द्वारा भूखण्ड पर किये जा रहे अवैध कब्जे का विरोध किया तथा उसने प्रतिवादीगण को वादग्रस्त भूमि को खाली करने तथा उसे वादी को सौपने के लिए कई बार अनुरोध किया तथा प्रतिवादीगण ने यधपि वादी को वादग्रस्त भूखण्ड को प्रतिवादी संख्या 2 को विक्रय करने हेतु निवेदन किया। वादग्रस्त भूखण्ड के विक्रय के प्रयास यधपि अमल मे नही आ सके। प्रतिवादीगण द्वारा वादी के वादग्रस्त भूखण्ड पर अवैध अतिक्रमण यधपि निरंतर रहा है।

उपरोक्त विवेचन अनुसार उच्च न्यायालय के निष्कर्ष में कोई असंगतता नही पाई जाती है।

खण्डपीठ द्वारा इस बिन्दु पर विस्तार से चर्चा की गई है कि वाद हेतुक का लोप जान बूझकर किया गया तथा अनजाने में नही किया गया है। यह एक ऐसा मामला है जहा खण्डपीठ के सकारण आदेश में कोई हस्तक्षेप नही किया जा सकता।

लागत खर्चो के सम्बन्ध में बिना किसी आदेश के अपील खारिज की जाती है।

अपील खारिज।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी सुरेन्द्र सोनी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।